International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 27-02-2026, Accepted: 30-03-2026, Published: 14-04-2026
Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 43-47

# प्रेमचंद और फकीरमोहन की कहानियों में सामाजिक यथार्थ और संवेदना

**मौसम तिवारी**
शोध छात्रा, हिंदी विभाग, रमादेवी महिला विश्वविद्यालय, विद्या विहार, भुवनेश्वर, ओड़िशा, भारत

**सारांश**
साहित्यकार समाज के चितेरे होते हैं। शब्द इनकी कूँची है और साहित्य की विविध विधाएँ इनका चित्रपट। अपने समकालीन समाज और जीवन से सर्जना का रस खींचकर वे समाज की प्रतिमूर्ति को जीवंत करते हैं। भारतीय साहित्याकाश के देदीप्यमान नक्षत्रों में प्रेमचंद और फकीरमोहन सर्वाधिक प्रकाशवान माने जाते हैं। एक भारत की सर्वाधिक बोली जाने वाली हिंदी भाषा के श्रेष्ठ कथाकार हैं तो दूसरे शास्त्रीय भाषा ओड़िआ के। ध्यातव्य है कि दोनों अपनी भाषाओं में कथा साहित्य के श्रेष्ठा माने जाते हैं। इनकी समय सीमा के बीच चार दशकों का अंतर है। परन्तु दोनों की सामाजिक दृष्टि सर्वाधिक समानता की परिचायिका है। निम्न–मध्यम–वर्गीय परिवार, भारत के ग्रामीण परिवेश की हवा–पानी और देश की पराधीनता का कटु अनुभव दोनों के जीवन के आधार रहे हैं। फलस्वरूप इन कथाकारों की कहानियों में सामाजिक न्याय की भावना, सामाजिक समता का संदेश, सामाजिक संवेदना की संस्थापना, मानव मूल्यों की गहरी पहचान, पारंपरिक शाश्वत तथा चिरंतन भारतीय जीवनदर्शन और सभ्यता, संस्कृति की महिमा का गान आदि कमोवेश समान रूप से द्रष्टव्य हैं। अपने समकालीन समाज की प्रवृत्ति और जीवन को आधार बनाकर प्रेमचंद और फकीरमोहन ने शोषित, पीड़ित और प्रताड़ित व्यक्ति के दुख और दर्द एवं पूंजीपतियों के प्रति उनके आक्रोश का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। शोषक समाज पर तीखा व्यंग्य कर उन्होंने संपूर्ण सामंती मूल्यों और ढाँचे की व्यर्थता को खोल कर रख दिया है। अपने समय के तमाम सामाजिक मूल्यों को उखाड़–पुघाड़ कर उनका सूक्ष्म विश्लेषण किया है। इसके पीछे इनका लक्ष्य है किसान–मजदूर–श्रमिक आदि साधारण वर्ग की जनता के प्रति सामाजिक संवेदना प्रकट करना। इसी कारण अपनी भाषा के कथा–साहित्य में दोनों सामाजिक संवेदना के संस्थापक के रूप में सामने आते हैं। यथार्थ से होते हुए आदर्श की खोज दोनों की कहानियों की प्रवृत्ति रही है। सामाजिक समता और मानवीय प्रेम इनके साहित्य के महान आदर्श हैं। सामाजिक शोषण से संबंधित प्रेमचंद की कहानी 'सवा सेर गेहूं', 'गरीब की हाय' आदि के समतुल्य फकीरमोहन की कहानी 'अधर्म वित्त', 'रेवती' आदि हैं। जहाँ एक ओर प्रेमचंद की 'स्त्री और पुरुष', 'अग्नि समाधि', 'कायर', 'उद्धार', 'नरक का मार्ग', 'मृतक भोज' आदि कहानियों में क्रमशः पर्दा प्रथा, बहुविवाह प्रथा, जातिभेद, दहेज प्रथा आदि के दुष्परिणामों, वैश्या–उद्धार एवं कर्मकांड आदि के पिछड़ेपन को दिखाया गया है, वहीं दूसरी ओर फकीरमोहन की 'पाठोईबहू', 'बगला बगुली', 'मौना–मौनी', 'धुलिया बाबा' और' डाक मुंशी' आदि कहानियों में आधुनिकता का आग्रह, प्रगतिशील चेतना की चाह, कुप्रथाओं का निवारण, दहेज प्रथा का विरोध, धार्मिक पाखंड की निंदा, आर्थिक शोषण के प्रतिरोध आदि सामाजिक दशाओं और दिशाओं का चित्रण देखने को मिलता है। दोनों कहानीकारों ने अपनी कहानियों में सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक मूल्यों की सफल अभिव्यक्ति की है।

**मूल शब्दः** प्रेमचंद, फकीरमोहन, सामाजिक यथार्थ, सामाजिक संवेदना, सांस्कृतिक मूल्य।

यथार्थ क्या है? जो है, वही यथार्थ है। जो होना चाहिए, वह तो आदर्श है। सामाजिक यथार्थ यानी समाज में जो भी है; समाज के रीत–नीत, चाल–चलन और आचार–व्यवहार आदि सब कुछ। संवेदना का अर्थ है, समान वेदना। सामान्य शब्दों में जहाँ यदि किसी ने आपसे कोई बात साझा की तो उस व्यक्ति को जितने कष्ट, जितनी पीड़ा, जितने सुख, जितने आनंद की अनुभूति हो ठीक उतना ही यदि आपके हृदय में अनुभव हो सके और आप उसके अनुरूप उससे सहानुभूति और प्रसन्नता व्यक्त करें तो वह संवेदना है।

साहित्य में सामाजिक यथार्थ और संवेदना को ढूंढना कोई निहायत कठिन कार्य नहीं; क्योंकि साहित्य समाज को आधार बनाकर ही खड़ा होता है। कल्पना की उड़ान वह उस आधार के बनने के बाद भरता है। अतः समाज के यथार्थ को किसी–न–किसी रूप में साहित्यकार अपनी रचना में ज्ञातवश अथवा अज्ञातवश दिखा ही देता है। सहृदय पाठक उसको पढ़कर उस यथार्थ स्थिति के साथ तथा उस में खड़े पात्र के प्रति संवेदना प्रकट करता ही है। ऐसे में सबसे महत्वपूर्ण तत्व है साहित्यकार की भाषा और उसकी रचना शैली; क्योंकि, यह जितना अधिक समाज के निकट होगी सामाजिक व्यक्ति उस स्थिति के साथ अथवा रचना में व्यक्त कथावस्तु के साथ सहज ही संबंध स्थापित कर सकेगा। ज्यों ही पाठक का संबंध उस रचना के साथ जुड़ जाता है, उसके भीतर उस रचना में वर्णित समस्याओं, जटिलताओं और सामाजिक यथार्थ के प्रति संवेदना स्वतः जन्म ले लेती है।

प्रेमचन्द और फकीरमोहन की भाषा शैली और रचना कौशल पर प्रश्न खड़ा करना दिनकर को दीप दिखाने के समान है। इसमें कोई दोराय ही नहीं कि प्रेमचंद और फकीरमोहन ने क्रमशः हिंदी तथा ओड़िआ साहित्य में अपनी लेखन शैली के माध्यम से आंदोलन खड़ा किया है। अतएव इन दोनों के साहित्य में सामाजिक यथार्थ और संवेदना का होना कोई आश्चर्य कर देने वाली बात नहीं। आश्चर्य कर देने वाली बात तो यह है कि अपने समाज से भिन्न दृष्टि रखने के कारण दोनों ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों और धर्माडंबरों आदि का अपनी कहानियों में विरोध किया है। यदि ये दोनों कथाकार अपने तत्कालीन समाज की विचारधारा के अनुरूप ही विचारधारा रखते तो कदापि यह निश्चित नहीं था कि दोनों की कहानियों में ऐसे मुद्दे देखने को मिलते जो आज भी कई मायनों में प्रासंगिक दिखते हैं।

## शोध समस्या

प्रस्तुत शोध आलेख प्रेमचंद और फकीरमोहन की कहानियों को आधार बना कर उनकी सामाजिक संवेदना और यथार्थ के अभिव्यक्तिकरण की समता, विविधता और तीव्रता व प्रखरता आदि का विवेचन–विश्लेषण करता है।

**साहित्य का पुनरावलोकन**

1. गल्पस्वल्प भाग–1, फकीरमोहन सेनापति, पुस्तक निकेतन, गंजाम, फरवरी–1970
2. गल्पस्वल्प भाग–2, फकीरमोहन सेनापति, फ्रेंड्स पब्लिशर्स, कटक–2, पाँचवाँ संस्करण–1995
3. मानसरोवर भाग–4, प्रेमचंद, मनोज पॉकेट बुक्स, दिल्ली
4. ऑनलाइन 'premchand.co.in' पर उपलब्ध प्रेमचंद की कहानियाँ

**शोध प्रविधि**

**मननात्मक, विवेचनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक।**

**विषय विश्लेषण**

प्रेमचन्द और फकीरमोहन ने अपने समकालीन समाज की प्रवृत्ति और जीवन को आधार बनाकर तत्कालीन साधारण जनता की समस्त समस्याओं का भरसक चित्रण करने का प्रयास किया है। जिसमें वे दोनों सफल भी हुए हैं।

उन्होंने अपने समाज के मूल्यों को उघाड़–पुघाड़कर उनका गहन विवेचन किया है। उनकी कहानियाँ अपने आप में उनके समय के समाज के यथार्थ और संवेदना की प्रत्यक्ष साक्षी हैं।

दोनों कथाकारों की कहानियों को पढ़कर ऐसे कम ही पाठक होंगे जिनका अश्रुपात न हुआ हो, जिन्होंने पात्र की मनोदशा को हृदयंगम न किया हो, जिनके सामने फकीरमोहन की 'रेवती' रोई न हो, 'सवा शेर गेहूं' के बदले जीवन का सब कुछ लूट न गया हो, 'गरीब की हाय' पढकर उसे जीवन में गरीब की हाय लगने से डर न लगा हो और 'बगला–बगुली' के प्रेम को देख जीवन में सात्विक प्रेम के प्रति जिज्ञासा व समर्पण जाग्रत न हुआ हो। बड़ी सुन्दर है इन दोनों लेखकों की कहानी लेखन शैली जिसमें वे यथार्थ और संवेदना को साथ लिए चलते हैं। यथार्थ कटु होता है संवेदना कोमल। ऐसे में दोनों को साथ लेकर चलना बहुत कठिन कार्य है परंतु यह प्रेमचंद और फकीरमोहन की श्रेष्ठता ही है कि उनकी कहानियों में ये दोनों तत्व एक दूसरे के परिपूरक के रूप में सामने आते हैं।

**विमर्श**

मसलन, फकीरमोहन की 'रेवती' (ओड़िआ मूल : रेबती) कहानी को ही लीजिए। "लो रेबती, लो रेबी, लो निआँ, लो चुलि"[1] (हाय रेवती, हाय रेवि, हाय कलमुँही, हाय मुँहझौंसी) ये सारे उलाहने, उस रेवती के लिए क्यों हैं? क्योंकि उसने लड़की होकर पढ़ना चाहा, उसकी पढ़ाई ही उसके माँ–बाप और भावी–पति को निगल गई। यदि उसने पढ़ाई नहीं की होती तो आज उसके घर परिवार की यह दुर्दशा कदापि नहीं होती। उसका भावी–पति भी केवल इसीलिए मरा; क्योंकि उसने षड्यंत्र करके रेवती को पढ़ाया। ये विचार केवल रेवती की दादी के ही नहीं हैं। ये तत्कालीन समाज की उन सभी महिलाओं के विचार हैं जो पितृसत्तात्मक मानसिकता से अनायास ही ग्रस्त हैं। उनकी नस–नस में उनके समाज में प्रचलित नारी के लिए कर्तव्य–अकर्तव्य कर्म की फेहरिस्त कुछ ऐसे बसी हुई है कि बस वही चिरंतन सत्य है। फकीरमोहन ने इस कहानी में बड़ी आसानी से उस स्त्री मानसिकता को दिखाने का प्रयत्न किया है जो कि स्त्री–विरोधी हो जाती है। रेवती की दादी वह पात्र है जिसके माध्यम से यह भाव उजागर होता है। यह कहानी तत्कालीन समय में महामारी संबंधी जनता के विचारों को भी स्पष्ट करती है। जिसमें यह तथ्य उजागर होता है कि महामारी तो एक नरभक्षी बुढ़िया है। जो डलिया लेकर द्वार–द्वार घूमती फिर रही है और जिस किसी दरवाजे जाती है उसका वंशलोप तय है। रेवती कहानी में रेवती, जो भजन गाती है;

"'का' आगे करिबि गुहारी?
तुमे न चांहिले नाथ गरिब जिब सरी।.....
शीतळ कर जीबन प्रेमामृत दान करि।"[2]

इसके माध्यम से ओड़िशा के ग्रामीण समाज की आध्यात्मिक चेतना की अभिव्यक्ति होती है। कहानी में जगह–जगह भागवत–पाठ और भागवत टुंगी (भागवत घर– वह स्थान जहाँ गाँव के लोग एकत्रित होकर भागवत पढ़ते हैं) का वर्णन मिलता है, जिसमें ओड़िशा की सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति होती है। 'रेवती' कहानी की शुरुआत में रेवती के घर का जो सुंदर, मनोरम वर्णन मिलता है वह कुछ और नहीं ओड़िशा के तत्कालीन ग्रामीण समाज के सहज व सरल रहन–सहन को ही व्यक्त करता नजर आता है। यथा; "गाँव के अंतिम छोर पर एक घर। घर में आगे–पीछे चार कमरे। आँगन की दीवार से सटा हुआ था धनकुट्टी घर, बीच में कुआँ। आगे की तरफ खुलता हुआ एक दरवाजा। पीछे की तरफ बगीचे में खुलता हुआ किवाड़। बैठकखाने में बाहर के लोग आकर बैठते थे.....।"[3]

ठीक इसी तरह फकीरमोहन की 'डाक मुंशी' कहानी में तत्कालीन कटक शहर का चित्रण है। साथ ही ओड़िशा के मध्यम–वर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति को भी उजागर किया गया है। अंग्रेजी की पढ़ाई की लालसा तब भी उस अदने डाक मुंशी को थी और आज भी है। नौकरशाही और सरकारी नौकरी में बड़े अफसरों का उनसे निचले पद वाले व्यक्ति से अपना व्यक्तिगत कार्य करवाना कोई नई बात नहीं है। हाँ, मगर तब थी जब यह कहानी लिखी गई। 'डाक मुंशी' कहानी अपने रचना काल में आज के बदलते संबंधों की परिपाटी को इतिहास–बद्ध कर चली गयी। आज आधुनिक समाज जिस तरह से संबंधों की नीरसता, कर्तव्यहीनता एवं स्वार्थ–लोलुपता से ग्रस्त है उसका बीजारोपण 'डाक मुंशी' कहानी में दिखाई देता है। यद्यपि कहानी के अंत में कहानीकार की आखिरी पंक्ति सब कुछ ठीक करने की बात करती है, पाठक को खुश होने की बात कहती है फिर भी पाठक को एक सदमे में छोड़ जाती है, जो उससे बार–बार पूछता है कि जिस पिता ने बेटे गोपाल के भविष्य निर्माण के लिए अपनी पूरी जिंदगी खपा दी, वही बेटा अफसर बनकर कैसे अपने पिता को त्याग सकता है! इस कहानी की संवेदना को शब्दों में प्रकट कर पाना बहुत कठिन है। प्रस्तुत कहानी की उपादेयता ही यही है कि उस संवेदना तक पहुंचने के लिए पाठक को यह कहानी पढ़नी ही होगी। यदि सार रूप में इसकी बात कह दी जाए तो पाठक, शायद ही भावना के उस गहरे अंतरतल तक पहुँच सकता है जहाँ फकीरमोहन पाठक को पहुँचाना चाहते थे।

'धूलिआ बाबा' कहानी धार्मिक पाखंड का पर्दाफाश करती है। फिरंगी शासन काल में अंग्रेज अफसर कैसे इन पाखंडी साधुओं से डर जाते थे इसमें उसका भी चित्रण मिलता है। उस काल की सामाजिक स्थिति को भी उजागर करती है। साथ ही इसमें फकीरमोहन जगन्नाथ संस्कृति का चित्रण भी करते नजर आते हैं। धर्म में अपने कार्य साधित करने के लिए चढ़ावा–चढ़ाने की प्रथा तब भी देखी जा सकती है। गांजे को प्रसाद मानकर सेवन करने की प्रथा भी प्रचलित थी। सांसारिक समस्याओं के लिए बाबाओं के पीछे घूमते लोग भी देखे जा सकते हैं और उनकी समस्याओं का समाधान करने के लिए माँग कर पैसे लेने वाले बाबा भी। साथ ही आज बाबाओं के यहाँ जो भी भगदड़ मचती है, जिसमें जनता एक दूसरे के ऊपर चढ़कर अपनी ही जान से हाथ धो बैठती है उसका चित्रण भी 'धूलिआ बाबा' कहानी में मिलता है। ये सामाजिक यथार्थ नहीं तो और क्या है? हाँ, ये यथार्थ आज भी प्रासंगिक है।

इसी तरह की एक और कहानी जो धार्मिक पाखंड पर प्रहार करती है वह है 'मौना–मौनी'। प्रस्तुत कहानी में पेड़ के नीचे पत्थर रखकर तीर्थयात्रियों से चढ़ावे के रूप में पैसे लेने की बात करना फकीरमोहन के लेखकीय साहस का प्रतीक है। जमाउतों (तीर्थ स्थलों और देश भर की यात्रा करने वाले बाबाजिओं और वैरागियों का समूह) का धार्मिक आतंक और भभूत वाले बाबा उस समय के समाज की वास्तविकता को प्रदर्शित करते हैं। अंग्रेजी

शासन का इन समस्याओं के प्रति प्रजा हितैषी रक्षण कार्य और तत्कालीन भारतीय जनता में धार्मिक चिंतन इस कहानी के कथ्य हैं। भारतीय संस्कृति में बाबाओं का पाखंड तब भी था और अब भी है। हाँ, इस कहानी में खंडगिरी की प्रकृति का जो वर्णन है वह बड़ा अद्‌भुत है। देश, काल और वातावरण का कहानी में इस प्रकार का सृजन ही पाठक को कहानी को आगे पढ़ने के लिए मजबूर करता है।

इसी तरह प्रेमचंद की 'मृतक भोज' कहानी हमारे समाज में धर्म के माध्यम से गरीब जनता के शोषण का दस्तावेज है।

फकीरमोहन की 'पठोई बहू' कहानी अपने समय से आगे की भावना को सामने रखती है। यह सोच कहानीकार की है। इस कहानी में माँ जब अपने बेटे से भोजन पकाने के कार्य हेतु ब्राह्मण को लाने से मना करती है; क्योंकि उसे यह पता नहीं होगा कि वह ब्राह्मण सच में ब्राह्मण है या नहीं और उसकी जाति के बारे में कही वह झूठ तो नहीं बोलेगा, जिससे कि अगर ऐसा हुआ तो बुढ़िया का धर्म भ्रष्ट हो जायेगा, ये तत्कालीन समय में प्रचलित जात–पाँत के यथार्थ को ही चित्रित करता है। बेटे गोपाल बाबू की शिक्षित स्त्री से विवाह करने की चाह एक आधुनिक पुरुष की चाह है जो चाहता है कि उसकी स्त्री उसके कंधे से कंधा मिलाकर चले। उसके घर लौटने पर वह केवल उसको रसोई परोसकर ही न दे बल्कि उसकी अनुपस्थिति में वह सारे कागजी कार्र भी कर सके। इस कहानी में अद्‌भुत प्रसंग हैं। स्त्री सरस्वती पूछती है कि मैं क्यों पढ़ूँ? तुम कमाने जाते हो, तुम्हें पढ़ने की आवश्यकता है, लेकिन मुझे पढ़ने की क्या आवश्यकता? पति उसे समझाता है कि पढ़ने से तुम्हारी बुद्धि विकसित होगी। इससे साफ पता चल जाता है कि तत्कालीन समाज में स्त्री शिक्षा की क्या स्थिति थी? साथ ही स्त्री शिक्षा के संबंध में स्वयं स्त्री का क्या मानना था? यह कहानी जनजातीय समाज की अपनी दुनिया और उनके लगान देने की आनाकानी का भी चित्रण करती है। पुराण–पाठ और धर्म–चर्चा उस समय के ओड़िशा के समाज की आध्यात्मिक चेतना को अभिव्यक्त करते हैं। वहीं दूसरी ओर यह कहानी झाड़–फूंक, ओझा–सोखा के प्रचलन का भी साक्ष्य प्रस्तुत करती है। कहानीकार ने बड़ी सहजता से समस्या के समाधान के लिए अंततः डॉक्टर को ही बुलाया है। इसके माध्यम से वे यह संदेश देना चाहते हैं कि चाहे कुछ भी हो जाए, अंततः डॉक्टर की आवश्यकता पड़ेगी और जो डॉक्टर का आश्रय न ले कर ओझा–सोखा का आश्रय लेगा उसको 'सरस्वती' की भाँती लहूलुहान ही होना पड़ेगा।

फकीरमोहन की 'बगला–बगुली' (हिंदी : बगुला–बगुली, एक दम्पति जिनके प्रेम को देखकर गाँववालों ने उनका नाम बगुला–बगुली रख दिया था) कहानी वैवाहिक जीवन के प्रेम की पराकाष्ठा को चित्रित करती है। दांपत्य जीवन की ऐसी कल्पना आज बहुत दूर प्रतीत होती है। इस कहानी के पात्र 'हरे कृष्ण' भजन गाते हैं, दिन–रात भगवान की शरण में रहते हैं, अपने समस्त कार्यों को अंततः हरि के ऊपर ही छोड़ देते हैं। जिसके माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक चेतना की अभिव्यक्ति इस कहानी में देखी जा सकती है। भागवतपाठ–घर का वर्णन इस कहानी में भी है। कहानी में बगुला के पिता के मरने पर लोगों के मुँह से निकलने वाली अंतिम उक्ति, "हाय! हाय! नीच कुल में कभी ऐसा सत्यवान धर्मपरायण नहीं देखा"[4] और बगुला–बगुली के मरने पर लोगों के मुँह से निकलने वाली उक्ति, "धन्य है! धन्य है! पति–पत्नी का ऐसा प्रेम, नीच कुल में भी ऐसा धर्म, ऐसा प्रेम!"[5] दोनों को देखें टो दो बातें समान दिखती हैं। एक तो 'नीच कूल' दूसरा 'इस प्रकार का विलक्षण गुण'। यह तत्कालीन समाज के तथाकथित नीच वर्ग के व्यक्तियों के प्रति विचारधारा को प्रकट करता है कि 'नीच कुल में अच्छे गुण नहीं मिलते'। यह तत्कालीन समाज का संवेदनापूर्ण यथार्थ ही तो है।

'अधर्म वित्त' फकीरमोहन की ऐसी कहानी है जो मानव जीवन में धर्म अर्जित धन की पक्षधर है। इस कहानी में महाजनी प्रथा का चित्रण किया गया है। बेटी विवाह के लिए कर्ज में डूबते परिवारों की दयनीय स्थिति का चित्रण है। ब्राह्मणों द्वारा अपने कर्म का त्याग कर अधोगति को प्राप्त होने का चित्रण है। वहीं 'गोटीपुअ गाआणिआ' ओड़िआ लोकनृत्य का चित्रण है, जो ओड़िशा की संस्कृति को अभिव्यक्त करता है। कहानी में हरिबोल की ध्वनि है जो यहाँ के आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक है। इस कहानी की लेखन शैली कुछ प्रेमचंद की–सी है। कहानीकार पहले समस्या का चित्रण करते हैं फिर उसके कुपरिणाम को दर्शाते हैं और अंततः वे सब कुछ सही कर देते हैं। कहानी रचना का ये ढंग प्रेमचंद का भी है, जिसमें वे अंत भला तो सब भला की नीति को चरितार्थ करते हैं।

प्रेमचंद की बात करें तो उनकी कहानी 'सवा सेर गेहूं' में भी इसी महाजनी प्रथा का वर्णन है। कैसे सवा सेर गेहूं बढ़ते–बढ़ते साढ़े पाँच मन गेहूं में बदल जाता है और कर्ज लेने वाले का पूरा परिवार, यहाँ तक कि उसकी अगली पीढ़ी भी कर्जदाता के यहाँ कृतदास बन जाती है। यह तत्कालीन समाज में आर्थिक शोषण का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। यह कहानी तद्युगीन सामाजिक व्यवस्था की पोल–पट्टी खोलते हुए ब्राह्मणों की साजिश को भी उजागर करती है।

मुंशी प्रेमचंद की एक और कहानी 'गरीब की हाय' है। जिसमें उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि यद्यपि प्रारंभ में अनाथों की आवाज अक्सर बेअसर होती है परन्तु अंततः गरीब की हाय लग ही जाती है और उसके शोषक का नाश निश्चित होता है। प्रेमचंद लिखते हैं, "मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर भय का जितना प्रभाव होता है, उतना और किसी शक्ति का नहीं! प्रेम, चिंता, निराशा, हानि यह सब मन को अवश्य दुखित करते हैं; यह हवा के हलके झोंके हैं और भय प्रचंड आँधी है।"[6] और "एक गरीब की हाय में कितना प्रभाव है।"[7] ये पंक्तियाँ उस सामाजिक संवेदना को जाग्रत करती हैं जो मनावता को बचाए रखने के लिए परम आवश्यक है।

फकीरमोहन की 'बगुला–बगुली' की भाँती प्रेमचंद की कहानी 'स्त्री और पुरुष' भी वैवाहिक दाम्पत्य जीवन का ही चित्रण करती है। लेकिन जहाँ एक ओर फकीरमोहन 'बगुला–बगुली' में शुरू से अंत तक दोनों दंपति के बीच के अपार स्नेह तथा प्रेम का चित्रण करते हैं वहीं दूसरी ओर 'स्त्री और पुरुष' में प्रेमचंद विवाह के पश्चात स्त्री के सुंदर न होने के कारण पुरुष का स्त्री के प्रति बेरुखापन और घृणा भाव को दिखाते हुए कहानी के सन्देश तक ले जाते हैं। अंततः प्रेमचंद स्त्री के माध्यम से यह पंक्ति कहलवाते हैं, "रूप के बदले मुझे उनकी आत्मा मिल गयी जो रूप से कहीं बढ़कर है"[8] और पति के मुख से पत्नी के संबंध में यह कहलवाते हैं कि, "तुम उसकी सूरत देखते हो और मैं उसकी आत्मा देखता हूँ।"[9] अर्थात कहानीकार दोनों पति–पत्नी को आत्मिक धरातल पर एकीकृत होता दिखाने का प्रयास करते हैं। इस कहानी में नायिका आशा की यह पंक्ति; ".....तुमने किसी मर्द को केवल रूपहीन होने के कारण कुँवारा रहते देखा है, रूपहीन लड़कियाँ भी माँ–बाप के घर नहीं बैठी रहतीं"[10] पाठक को संवेदना के धरातल पर गहराई से छू जाती है।

'अग्नि समाधि' प्रेमचंद की एक ऐसी कहानी है जिसकी शुरुआत में साधु संग से होने वाले कुपरिणामों का चित्रण है। फकीरमोहन की कहानी 'बगुला–बगुली' का पात्र सप्ना (बगुला) गाँव का चौकीदार था 'अग्नि समाधि' में रुक्मिन और सिलिया का पति पयाग भी गाँव का चौकीदार ही है। यह कहानी पुरुष की स्त्री विरोधी नीतियों का चित्रण करती है। कहानी में प्रेमचन्द पयाग द्वारा जो भजन गवाते हैं;

"ठगिनी! क्या नैना झमकावे..... तीन लोक भरमावे ठगिनी.....।"[11]

इसमें भारतीय जीवन दर्शन में माया के रूप को दिखाया गया है। प्रेमचंद की 'कायर' कहानी केशव और प्रेमा के इर्दगिर्द घूमती है। इसमें कलकत्ता के विक्टोरिया पार्क का चित्रण है। विवाह के लिए जाति साम्यता, उस समय की आवश्यकता थी जिसका चित्रण कर कहानी तत्कालीन समाज में जात–पाँत के प्रचलन को

दिखाने का प्रयत्न करती है। स्त्री–शिक्षा का समर्थन तो है, परंतु नायिका की परिणिति आत्महत्या दिखाकर उसकी विफलता को भी दिखाने का प्रयास किया गया है। वहीं केशव जो कि प्रेमा का प्रेमी है शुरू में तो बड़ी–बड़ी बातें करता है, परंतु वास्तविक स्थिति के उपस्थित होने पर कैसे अपना पलड़ा झाड़ लेता है, इसको भी दिखाने का प्रयत्न किया गया है। केशव प्रेम के लिए खड़ा न होने के कारण कायर है और प्रेमा आत्महत्या करने से। कहानीकार हमारे समाज की इन नीतियों के कारण युवा पीढ़ी के नाश को दिखने में सफल हुए हैं। यह कटु सामाजिक यथार्थ है। प्रेमचंद की 'उद्धार' कहानी में पहली ही पंक्ति से ही नारी जीवन की त्रासदी को व्यक्त किया गया है जो तद्युगीन सामाजिक यथार्थ है और आज भी कई मायनों में प्रासंगिक है; "हिंदू समाज की वैवाहिक प्रथा इतनी दुषित, इतनी चिंताजनक, इतनी भयंकर हो गयी है कि कुछ समझ में नहीं आता, उसका सुधार क्योंकर हो। .....कन्या का जन्म होते ही उसके विवाह की चिंता सिर पर सवार हो जाती है.....। ....ऐसे माता–पिताओं की कमी नहीं है जो कन्या की मृत्यु पर हृदय से प्रसन्न होते हैं, मानों सिर से बाधा टली। इसका कारण केवल यही है कि देहज की दर, दिन दूनी रात चौगुनी, पावस–काल के जल–वेग के समान बढ़ती चली जा रही है। .....बेटे एक दर्जन भी हों तो माता–पिता को चिंता नहीं होती। बेटों की कुचरित्रता कलंक की बात नहीं समझी जाती; लेकिन कन्या का विवाह तो करना ही पड़ेगा.....? अगर विवाह में विलम्ब हुआ और कन्या के पाँव कहीं ऊँचे नीचे पड़ गये तो फिर कुटुम्ब की नाक कट गयी.....। .....लुत्फ तो यह है कि जो लोग बेटियों के विवाह की कठिनाइयों को भोग चुके होते हैं वहीं अपने बेटों के विवाह के अवसर पर बिलकुल भूल जाते हैं कि हमें कितनी ठोकरें खानी पड़ी थीं, जरा भी सहानुभूति नहीं प्रकट करतें, बल्कि कन्या के विवाह में जो तानाव उठाया था उसे चक्र–वृद्धि ब्याज के साथ बेटे के विवाह में वसूल करने पर कटिबद्ध हो जाते हैं। कितने ही माता–पिता इसी चिंता में घुल–घुलकर अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं; कोई संन्यास ग्रहण कर लेता है, कोई बूढ़े के गले कन्या को मढ़ कर अपना गला छुड़ाता है, पात्र–कुपात्र का विचार करने का मौका कहाँ, ठेलमठेल है।"[12] इससे बेहतर यथार्थ स्थिति का संवेदनात्मक चित्रण और क्या हो सकता है?

'नरक का मार्ग' कहानी अनमेल विवाह की त्रासदी का वर्णन करती नजर आती है। स्त्री के मुख से प्रेमचन्द कहानी के अंत में कहलवाते हैं, "मैं ये पंक्तियाँ न लिखतीं, लेकिन इस विचार से लिख रही हूँ कि मेरी आत्मकथा पढ़कर लोगों की आँखें खुलें; मैं फिर कहती हूँ, अब भी अपनी बालिकाओं के लिए मत देखो धन, मत देखो जायदाद, मत देखो कुलीनता, केवल वर देखो। अगर उसके लिए जोड़ का वर नहीं पा सकते तो लड़की को क्वाँरी रख छोड़ो, जहर देकर मार डालो, गला घोंट डालो, पर किसी बूढ़े खूसट से मत ब्याहो। स्त्री सबकुछ सह सकती है, दारुण से दारुण दुःख, बड़े से बड़ा संकट, अगर नहीं सह सकती तो अपने यौवन–काल की उमंगों का कुचला जाना।"[13] यह असंभव है कि कहानी को पढ़कर पाठक उसके संदेश में गुंफित संवेदना को हृदयंगम न कर पाए।

## निष्कर्ष

प्रेमचंद और फकीरमोहन की कहानियों का अनुशीलन करने पर दोनों के सामाजिक यथार्थ और संवेदना के चित्रण की समानताओं और असमानताओं का ज्ञान हो जाता है। दोनों कहानीकारों ने निम्न मध्यमवर्गीय परिवार, शोषक–शोषित वर्ग, भारत के ग्रामीण परिवेश की हवा–पानी, भारतीय जीवन–दर्शन, सभ्यता और संस्कृति आदि का चित्रण कर सामाजिक न्याय की भावना को दृढ़ किया है, सामाजिक समता का संदेश दिया है, सामाजिक संवेदना की स्थापना की है, मानव मूल्यों की गहरी पहचान करवाई है। उन्होंने अपने–अपने स्तर पर सामाजिक मूल्यों का सूक्ष्म विवेचन कर किसान, मजदूर, श्रमिक आदि साधारण वर्ग की जनता के प्रति सामाजिक संवेदना को जाग्रत कर यथार्थ से होते हुए आदर्श की खोज की है। सामाजिक समता और मानवीय प्रेम, आधुनिकता का आग्रह, प्रगतिशील चेतना की चाह, कुप्रथाओं का निवारण, दहेज प्रथा का विरोध, धार्मिक पाखंड की निंदा, आर्थिक शोषण का प्रतिरोध आदि उनके इस यथार्थ चित्रण के ध्येय हैं। साथ ही भारतीय साहित्य के ये श्रेष्ठ कथाकार अपनी कहानियों के माध्यम से भारतीय सांस्कृतिक मूल्य की प्रतिष्ठा भी करते हैं।

जहाँ तक असमानता की बात है, कई आलोचकों का मानना है कि प्रेमचंद की कहानियों में जाति प्रथा का खंडन देखने को मिलता है परंतु जगन्नाथ संस्कृति के कारण ओड़िशा में जाति प्रथा का प्रचलन कम होने के चलते फकीरमोहन की कहानियों में जाती प्रथा का अधिक चित्रण देखने को नहीं मिलता। ध्यातव्य है कि विविध कहानियों के आधार पर यत्र–तत्र यह देखा जा सकता है कि जाति प्रथा का चित्रण फकीरमोहन ने भी किया है। अतः प्रेमचन्द और फकीरमोहन के बीच कथा साहित्य सृजन के क्षेत्र में असमानता के तत्त्व तो बहुत कम ही नजर आते हैं। यद्यपि दोनों के समय में चालीस वर्ष का अंतर है तथापि दोनों का समाज और जीवन संघर्ष कहीं न कहीं एक सा ही रहा है। मानव मन की बारीकियों को समझते हुए साहित्य की कहानी विधा में उसको सफल रूप से उतारना दोनों की सबसे बड़ी विशेषता है।

## शोध सीमाएँ और भविष्य शोध योजना

प्रस्तुत शोध विषय बहुत विस्तृत है अतः फकीरमोहन एवं प्रेमचंद की समस्त तीन सौ से अधिक कहानियों का अध्ययन कर पाना संभव न हो सका। ग्रामीण और आंचलिक भाषा प्रयोग और उनमें निहित सांस्कृतिक चेतना को समझाना तनिक कठिन रहा। लिप्यंतरण की सहायता से ओड़िआ पद्य प्रयोग को प्रस्तुत किया गया उनका काव्यानुवाद भी किया जा सकता था परंतु आलेख में शब्दों की सीमा भी थी।

भविष्य में प्रेमचंद एवं फकीरमोहन की कहानियों की सामाजिक संवेदना, प्रासंगिकता और सांस्कृतिक चेतना का विषद तुलनात्मक अध्ययन संभव है।

## स्वघोषणा

शोधार्थी यह घोषणा करती है कि प्रस्तुत शोध आलेख उसकी मौलिक कृति है। इसमें प्रयोग की गई सामग्रियों को निम्न में संदर्भित किया गया है।

## सन्दर्भ सूची :


1. सेनापति फकीरमोहन, रेवती, गल्पस्वल्प भाग–1, पुस्तक निकेतन, गंजाम, फरवरी–1970, पृ. सं. 12
2. सेनापति फकीरमोहन, रेवती, गल्पस्वल्प भाग–1, पुस्तक निकेतन, गंजाम, फरवरी–1970, पृ. सं. 2
3. सेनापति फकीरमोहन, रेवती, गल्पस्वल्प भाग–1, पुस्तक निकेतन, गंजाम, फरवरी–1970, पृ. सं. 1
4. सेनापति फकीरमोहन, बगला–बगुला, गल्पस्वल्प भाग–2, फ्रेंड्स पब्लिशर्स, कटक–2, पाँचवाँ संस्करण–1995, पृ. सं. 72
5. सेनापति फकीरमोहन, बगला–बगुला, गल्पस्वल्प भाग–2, फ्रेंड्स पब्लिशर्स, कटक–2, पाँचवाँ संस्करण–1995, पृ. सं. 78
6. प्रेमचंद, गरीब की हाय, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/gareeb-ki-haay वेबसाइट देखने का दिनांक और समय– 26/02/2025, 12 p.m.
7. प्रेमचंद, गरीब की हाय, ऑनलाइन स्रोत से– - http://premchand.co.in/story/gareeb-ki-haay वेबसाइट देखने का दिनांक और समय– 26/02/2025, 01 p.m.

8. प्रेमचंद, स्त्री पुरुष, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/stree-aur-purush, वेबसाइट देखने का दिनांक और समय– 26/02/2025, 1.45 p. m.
9. प्रेमचंद, स्त्री पुरुष, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/stree-aur-purush p.m.
10. प्रेमचंद, स्त्री पुरुष, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/stree-aur-purush p.m.
11. प्रेमचंद, अग्नि समाधी, मानसरोवर भाग–4, मनोज पॉकेट बुक्स, दिल्ली, पृ. सं. 111
12. प्रेमचंद, उद्धार, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/uddhar#google_vignette वेबसाइट देखने का दिनांक और समय– 27/02/2025, 12.05 p.m.
13. प्रेमचंद, नरक का मार्ग, ऑनलाइन स्रोत से– http://premchand.co.in/story/narak-ka-marg p.m.